IJMRSETM

e-ISSN: 2395 - 7639

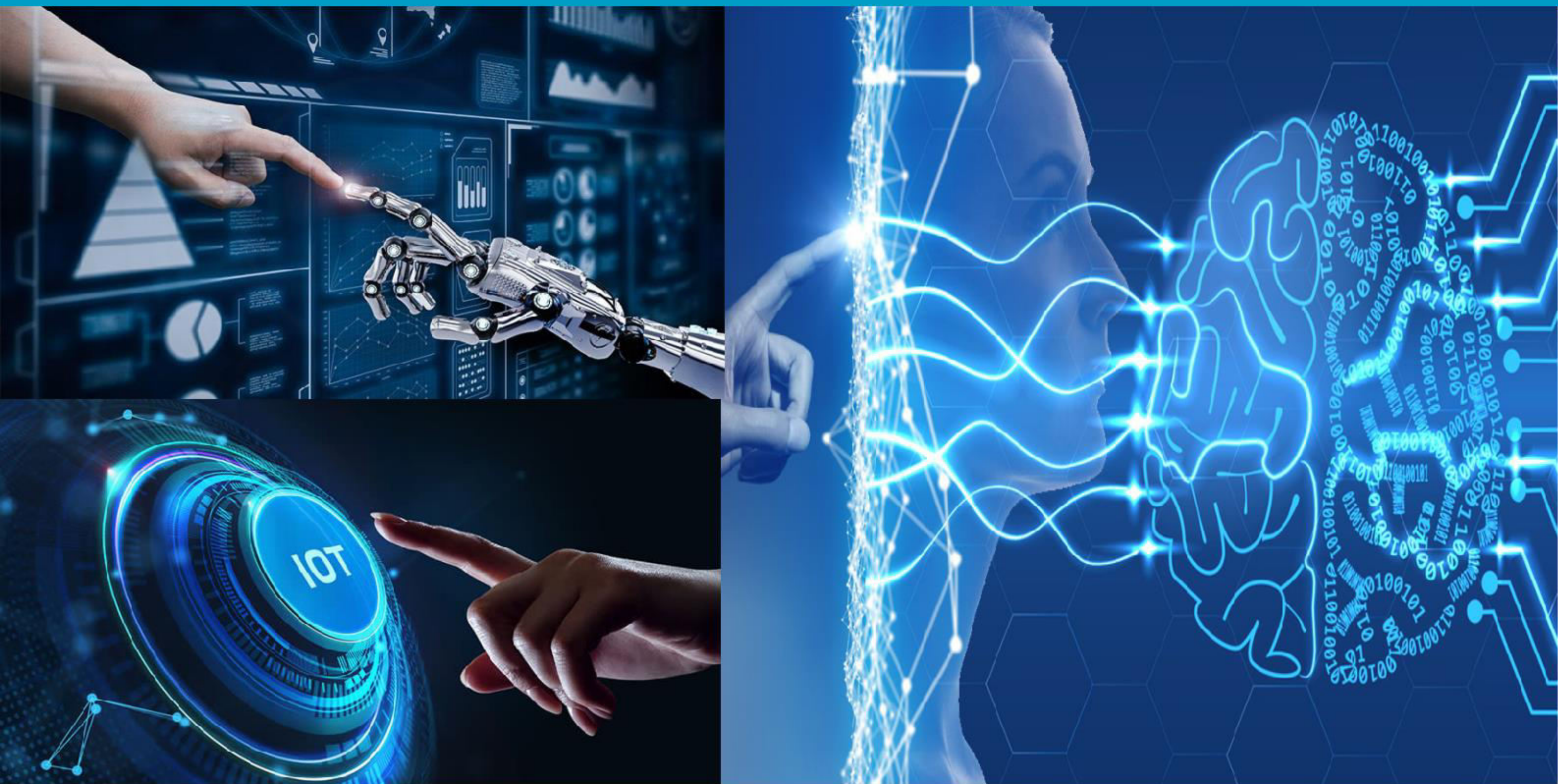

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

IN SCIENCE, ENGINEERING, TECHNOLOGY AND MANAGEMENT

Volume 9, Issue 10, October 2022

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

Impact Factor: 7.580

+91 99405 72462 +9163819 07438 ijmrsetm@gmail.com www.ijmrsetm.com

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580|

| Volume 9, Issue 10, October 2022 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2022.0910019 |

संस्कृत साहित्य में गीतिकाव्य का उद्भव और विकास

Dr. Jitendra Singh Chauhan

Principal, Sanskrit Sahitya, S.G.R. Mahavidyalaya Yaduvansh Nagar, Talgram, Kannauj, Uttar Pradesh, India

सार

सामान्य शब्दों में गीतिकाव्य का अर्थ (है – 'गाया जा सकने वाला काव्य' परंतु प्रत्येक गाए जाने वाले काव्य को गीतिकाव्य नहीं कहा जा सकता। जिस गीत में तीव्र भावानुभूति, संगीतात्मकता, वैयक्तिकता आदि गुण होते हैं, उसे गीतिकाव्य कहते हैं। इसीलिए कहा गया है कि भारतीय गीतिकाव्य की परंपरा स्फुटतः भारतीय वेदों से पूर्व की है। लोकगीत उस परंपरा का आदि छोर है। अब तक गीतिकाव्य सैकड़ों करवट ले चुका है और आज उसकी नई-नई धारायें विकसित हो चुकी हैं। युग में जब परिवर्तन होता है या आता है तो गीत भी उससे अप्रभावित नहीं रहता। अतः गीतिकाव्य के स्वरुप और विकास को अलग-अलग स्तरों पर समझना समीचीन होगा।मानव सभ्यता में गीत की प्राचीन परंपरा है। गीत अथवा संगीत का मानव जीवन में विशेष महत्व है। एक नादान शिशु भी संगीत की स्वर लहरी से प्रभावित होकर रोना भूल जाता है। प्रारंभ में गीत के अर्थ की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता था द्य जो कुछ भी लय के साथ गाया जाता था, उसे गीत मान लिया जाता था द्य इस आधार पर एक निरर्थक लयबद्ध रचना भी गीत मानी जाती थी। एक निरर्थक लयबद्ध रचना को गीत मानना उचित है या अनुचित यह एक विवादित विषय है परंतु इतना निश्चित है कि गीतों का उद्भव मानव की स्वाभाविक रागप्रियता के कारण हुआ।

गीति प्रचीनतम विधा है हिन्दी साहित्यकोश के अनुसार भी गीत का प्रयोग प्राचीनतम है। यदि हम कहें कि छन्द स्वंय गीतिकाव्य की एक इकाई है तो अनुचित न होगा। रमानाथ अवस्थी ने ठीक ही कहा है कि "कविता किसी से अलग नहीं है क्योंकि वह सबको किसी न किसी रूप में बहलाती रहती है। जिस कविता में यह प्रतीति हो, मैं उसी को कालजयी मानता हूँ। ऊँची कविता कृष्ण की बांसुरी जैसी है जिसमें हमारा दर्द, और दिल बजता है।" कविता गीत तत्व से ही कालजयी बनती है। चिरंजीत ने इसीलिए कहा है कि, ष्मानवीय अनुभूतियों, जीवनानुभवों और विचारों की गीतात्मक अभिव्यक्ति हो वास्तविक कविता है। इस कलम से यह इंगित होता है कि गीत स्वंय तो गीत होता ही है अन्य विधाओं दोहा, छप्पय, गजल, मुक्तक आदि को भी अपने तत्वों से उपकृत करता है।
ऐशियाई देशों के आतंरिक चरित्रों में कुछ समान तत्व व्याप्त हैं। इसीलिए शंभुनाथ सिंह ने लिखा है कि "नृत्यगान और रंगारंग जीवन ऐशियाई देशों के लोगों की निजी पहचान है। इस कथन से जीवन में गीत-तत्व की अनिवार्यता तथा उसका महत्व उद्घाटित होता है।" गीत का गायन-तत्व उसे अनिवार्य और अमर बनाता है। दिनेश सिंह तो यहाँ तक कहते हैं कि "जीवन की जिस गुनगुनाहट को अन्य कला विधायें मानवीय संवेदना से भरे पूरे राग में नहीं गा पातीं, उसे कविता गाती है। यहाँ गाती है शब्द ध्यान देने योग्य है इससे गीत-तत्व का संदेश उभरता है। तात्पर्य यह है कि अन्य विधायें भी गीत तत्व की बदौलत ही गतिमान रहती हैं। -
गीत की प्रकृति बहुआयौमी है। डॉ० विनोद गोदरे ने इसी कारण कहा है कि नवगीत ने ष्युग की संवेदना को गीतजीवी बना दिया है और कृषि तथा सामंतीय गीत को आधुनिकता प्रदान की है। गीत ने जीवन के हर पक्ष को अपनी परिधि में समेटा है चाहे वह कृषि हो, चाहे भांवरों का समय अथवा पुत्र जन्म का अवसर।

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580|

| Volume 9, Issue 10, October 2022 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2022.0910019 |

परिचय

गीतिकाव्य का अर्थ अंग्रेजी के शब्द ‘लिरिक’ के समानांतर है। इस पर विद्वानों में मतभेद भी हैं। हिन्दी साहित्यकोश के अनुसार गीतिकाव्य ‘लिरिक’ के तत्व बोध के लिए निर्मित आधुनिक शब्द है, जिसका मूलभूतः आधार गीत अथवा गीतिकाव्य है। गीत का प्रयोग प्राचीनतम है और नाट्य शास्त्र में इसके प्रयोग मिलते हैं। ‘गीत शब्दितगानयोः (हेमचन्द्र) और गीत गानमिमेसमे (अमरकोश)। गीतिकाव्य शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग लोचन प्रसाद पाण्डेय ने ‘कविता-कुसुम-माला (प्रथम संस्करण-जून 1909) की भूमिका में किया।[1,2]

गीतिकाव्य का आंचल बहुत बड़ा है। इसीलिए डॉ० सुरेश गौतम ने कहा है कि ष्उत्तर को दक्षिण, पूरब से पश्चिम और धरती से अम्बर तक जो कुछ भी प्रत्यक्ष या परोक्ष से हमारी प्राण-सत्ता को प्रभावित करता है वह सबकुछ गीत का विषय है। निर्मला जोशी के अनुसार श्जहाँ गीत है वहाँ कविता है। गीत का प्रयोजन नितांत प्रजातांत्रिक है। उसका अस्तित्व कविता के उद्गम काल से ही है।

गीत की मूलपूँजी गायन है। इसमें संगीत प्रवाहित रहता है। ‘गीता’ इसलिए गीता है कि वह पद्य में है। पद्य या छन्द गीत का अस्थिपंजर है, उस पर भाषा हाड मांस की तरह चढ़ी रहती है और व्यक्त भावबोध उसकी प्राणवायु है। पंत जी के अनुसार- ‘कविता हमारे प्राणों का संगीत है, छन्द हृदयकंपन, कविता का स्वभाव ही छन्द में लयमान होना है। 10 गीत और संगीत का चोली दामन का साथ रहता है। वैसे कहा तो यह भी जाता है कि साहित्य संगीत के बिना सींग और पूंछ विहीन पशु के समान लगता है। गीतिकाव्य में संगीत की अनिवार्यता अन्य विधाओं से अधिक रहती है।,

गीत ही गीतिकाव्य आधारभूत तत्व है। मानव सभ्यता के जन्म के साथ ही गीत का जन्म हुआ है। गोपालदास नीरज ने एक मुक्तक में गीत की उम्र और उसकी प्रकृति का प्रक्षेपण किया है। यथा

“आयु है जितनी समय की गीत की उतनी उमर है,
चाँदनी जब से हँसी है रागिनी तब से मुखर है।
जिन्दगी गीता स्वंय है, जान लें गाना अगर हम
हर सिसकती सांस लय है हर पिघलता अश्रु स्वर है।”

गीत की परिभाषा के रूप में डॉ० मंजु गुप्ता कहती हैं-ष्संगीत की स्वर लहरियों के आरोह-अवरोह पर जब कविता के कमनीय चरण, नृत्य करने लगते हैं, कवि की अंतरिम भावानुभूति की सौंदर्य-भागीरथी में जब संगीत की मधुर कालिन्दी आ मिलती है तब गीत का जन्म होता है।ष् इस प्रकार गीत भावना, संगीत और छन्द का समन्वय है। भावानुभूति गीत की अनिवार्यता है। इसीलिए डॉ० जीवनप्रकाश जोशी ने कहा है कि “गीत रचना वही अधिक सार्थक और हृदय स्पर्शी हो सकती है जिसमें अलंकार कम से कम हों, ध्वनि विशेष हो।”

गीतिकाव्य की परिभाषा में विद्वानों ने परिभाषायें कम व्याख्यायें अधिक दी हैं। इसका कारण यह है कि गीत इतना व्यापक और बहुरंगी है कि उसे एक वाक्य में परिभाषित कर देना संभव नहीं होता है। “मानव जीवन के अधिकांश क्षण दैनिक अभ्यासों के संकलन मात्र होते हैं। कुछ ही क्षण भावुकता कल्पना और प्रेरणा से उद्वेलित होते हैं और गीतिकाव्य ऐसे ही रागात्मक अनुभूतियों की इकाई है। ऐसे क्षणों में अनुभूति उभार और निखार पर होती है।तथा इसी उभार और निखार से गीत की लय और शब्द फूट निकलते हैं। इसी कारण डॉ० रामसिंह अत्रि ने लिखा है कि ष्भाव प्रवणता गीत का अनिवार्य तत्व है, हार्दिक भावनाओं का संश्लिष्ट और प्रबल आवेग ही सहज रूप से गीत के रूप में फूटता है।ष् गीत में बुद्वितत्व पर भाव तत्व हावी रहता है और संगीत में भाव को रसात्मकता की ऊँचाई प्रदान कर देता है।[3,4]

गीतिकाव्य या गीत हमारे जीवन में हर स्तर पर व्याप्त रहता है। यहाँ तक कि शोक के अवसरों पर शोकगीत का भी विधान है। कहा तो यह भी गया है कि हमारे दुखद संवों का चित्रण करने वाले गीत ही अधिक मधुर होते हैं। गीत या गान का जन्म ही दुःख से माना गया है। यथा वियोगी होगा पहला कवि

आह से उपजा होगा गान
उमड़कर आँखों से चुपचाप
बही होगी कविता अनजान।’

करुणा व क्षोभ की अभिव्यक्ति की आह से ही बाल्मीकि के मुख से पहली कविता फूटी थी। -

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580|

| Volume 9, Issue 10, October 2022 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2022.0910019 |

गीत को मुक्तक माना गया है जो प्रबंधकाव्य का एक प्रकार से विलोम होने का अर्थ देता है। इस आधार पर इसका आकार भी स्वतंत्र और स्वतःपूर्ण होता है। गीतिकाव्य अर्थ गीत के लक्षणों को जानने से भी प्रकट हो जाता है।

(क) पाश्चात्य विचारकों के गीती काव्य संबंधी मत

हरबर्ट रीड के अनुसार – " गीत का मूल अर्थ तो लुप्त हो गया है लेकिन उसका व्यावहारिक पक्ष प्रचार में आ गया है। अब गीत से उस रचना का बोध होता है जिसमें सूक्ष्म अनुभूतियां हों , जो एकांत आनंद से प्रबुद्ध होती हैं। "

• हीगेल के अनुसार - " गीतिकाव्य का एकमात्र उद्देश्य शुद्ध कलात्मक शैली में आंतरिक जीवन की विभिन्न अवस्थाओं , उसकी आशाओं , उसके आह्लाद की तरंगों और उसकी वेदना की चीत्कारों का उद्घाटन करना

• प्रो गुमरे के अनुसार – " गीति काव्य वह अंतर्वृत्ति निरूपिणी कविता है जो वैयक्तिक अनुभूतियों से पोषित होती है , जिसका संबंध घटनाओं से नहीं अपितु भावनाओं से होता है तथा जो किसी समाज की परिष्कृत अवस्था से निर्मित होती है। "

(ख) भारतीय विचारकों के गीतिकाव्य संबंधी मत

• महादेवी वर्मा के अनुसार – " सुख - दुख की भावावेगमयी अवस्था - विशेष का गिने - चुने शब्दों में स्वरसंधान से उपयुक्त चित्रण कर देना ही गीति है। "

• डॉ नगेंद्र के अनुसार – " गीतिकाव्य की आत्मा है - भाव , जो किसी प्रेरणा के भार से दबकर एक साथ गीत में फूट निकलता है। "

• डॉक्टर गणपति चंद्रगुप्त के अनुसार – " गीतिकाव्य एक ऐसी लघु आकार एवं मुक्तक शैली में रचित रचना है जिसमें कवि निजी अनुभूतियों या किसी एक भाव - दशा का प्रकाशन गीत या लयपूर्ण कोमल पदावली में करता है। "

यह तो हम सभी जानते हैं कि गीति काव्य को ही काव्य का सबसे प्राचीन रूप माना जाता है . हमारे वेदों में भी एक ऐसा वेद सामवेद है जिसका गायन होता है - गीत शब्द का अर्थ भी गाये जाने से ही है

बौद्ध साहित्य कि थेर गाथाओं में भी गीति काव्य के दर्शन मिलते हैं . ' मेघदूत ' को भी अधिकाँश विद्वान गेय काव्य ही मानते हैं . संस्कृत साहित्य में गीति काव्य अपने वास्तविक रूप में ' गीतगोविन्द ' में प्राप्त होता है . जयदेव के इस काव्य का हिंदी साहित्य पर प्रत्यक्ष प्रभाव दिखाई पड़ता है . विद्यापति और चंडीदास दोनों कवियों ने जयदेव की शैली को ऐसा आत्मसात किया जिससे काव्यरस और संगीत रस के मिश्रण से गीतकारों के सम्मुख हिंदी गीतों का एक आदर्श रूप सामने आया .

इसके बाद कबीरदास के रहस्यगीत बहुत लोकप्रिय हुए जिन्होंने खुद को अपने राम की बहुरिया बना कर विरह और मिलन सम्बन्धी गीतों का ऐसा राग फूंका कि आज तक जनता को तड़पाता और आह्लादित करता है .

कबीर के बाद सूरदास , तुलसी और मीरा आदि वैष्णव भक्तों के गीति काव्यों में रागात्मक तत्वों की प्रधानता पायी जाती है . विद्यापति के सामान सूर के पदों पर भी ' गीतगोविन्द ' का प्रभाव स्पष्ट झलकता है - सूर के गीति काव्य में रतिभाव के तीनों प्रबल और प्रधान रूप – भगवद्विशयक रति , वात्सल्य और दाम्पत्य रति - प्रचुर मात्रा में प्राप्त होते हैं .[5,6]

तुलसीदास की गीतावली में भी भावों की व्यंजना उसी रूप में हुई है जिस रूप में मनुष्य को उनकी अनुभूति हुआ करती है या हो सकती है .

मीरा ने विरहिणी के रूप में जिन पदों में आत्मनिवेदन किया है वे निजत्व की पराकाष्ठा तक पहुँच गये हैं . मीरा के विरह से आहत हृदय को जब कसक और वेदना विक्षिप्त बना देती है उसकी मनोदशा का कोई पारखी नहीं मिलता .

इन सब के बाद हरिश्चंद्र युग की शुरुआत हुई . इस काल में गीति काव्य की दो धारायें हो गयी .

1. आत्मनिवेदन शैली
2. राष्ट्रीय शैली

भारतेंदु की चन्द्रावली में प्रथम शैली और भारत दुर्दशा में दूसरी शैली स्पष्ट झलकती है .

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580|

| Volume 9, Issue 10, October 2022 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2022.0910019 |

विचार-विमर्श

राष्ट्रीय गीत जय जय प्यारा भारत देश श्री धर पाठक जी के गीत से सारा हिंदी प्रदेश गूँज उठा . इस युग के मैथिलीशरण गुप्त जी के राष्ट्रीय गीतों का अधिक प्रचार हुआ -

बाबु गुलाब राय जी का मत था कि गुप्त जी ने चार प्रकार के गीतों का प्रणयन किया ;

1. छायावादी
2. आह्लादसूचक
3. वेदनासूचक
4. नारी - गौरव सूचक

अन्य साहित्यिक विधाओं की भाँति ही गीतिकाव्य का भी उदय वेद से ही हुआ है। यद्यपि वेद आध्यात्मिक ज्ञान एवं कर्मकाण्ड के साधक हैं, कवित्व के नहीं। तथापि वैदिक स्तुतिपरक ऋचाओं में गीतिकाव्य के अर्धस्फुटित अंकुर देखे जा सकते हैं, जहाँ अन्तर्दर्शन एवं अनुभूत भावनाओं से भरित अन्तः प्रेरणा से उयीप्त ऋषि की वाणी कवित्वमयी बन गई हैं। वस्तुतः वैसे तो सर्वत्र ऋषि वाणी ने बड़े सीधे - सादे सरल शब्दों में ही अपने अभीष्टार्थ का प्रकाशन किया है, पर क्वचित् समय - समय पर जहाँ उसकी भावनायें अति प्रबल हो उठी हैं उसकी वाणी संगीतात्मक एवं कवित्वमयी बनकर प्रस्फुटित हुई है। इतना ही नहीं ऐसे स्थलों पर उसकी भाषा भी अति मधुर एवं लालित्यपूर्ण तथा अलंकृत हो गई है।

ऋग्वेद में ऐसे अनेक सूक्त हैं जिनमें ऊषा, वरूण, इन्द्र, विष्णु आदि देवताओं की स्तुति की गयी है। अकेले ऊषा के लिए ही 20 सूक्त प्रयुक्त हुए हैं और विद्वानों ने इन्हीं स्तुतिपरक सूक्तों को गीतिकाव्य का उद्गम माना है। ऋग्वेद के एक मन्त्र में ऊषा को एक लावण्यमयी युवती के रूप में चित्रित किया है। श्रृंगार से पूर्ण इस अभिव्यक्ति से मानव का हृदय भाव - विभोर हुए बिना नहीं रहता। ष्सूर्य और ऊषा को प्रेमी - प्रेमिका के रूप में चित्रित किया गया है कि हे प्रकाशवती ऊषा। तुम कमनीय के समान अत्यन्त आकर्षणमयी होकर अभिमत फल देने वाले सूर्य के समीप जाती हो और उसके सम्मुख प्रसन्न वदना युवती के समान अपने वक्ष को आवरण रहित करती हो। [7,8] पाश्चातत्य विद्वान 'मैक्डानल' ने भी इन गीतियों के महत्व को वेदों में स्वीकारा है। ऊषा की स्तुति में यह गेयता और काव्यमयता देखी जा सकती है। इसमें उपमा आदि अलंकारों का भी यत्र - तत्र रमणीक प्रयोग भी है। आनन्दोद्रेक से सिक्त हृदय ऋषि ऊषाविषयक अपने भावों को अलंकार के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। ऊषा जब शुभ्र उज्जवल रूप को धारण कर स्नान करती हुई सुन्दरी की भाँति आकाश में प्रकट होती है अथवा भ्रातृविहीना भागिनी की भाँति स्वदायित्व की प्राप्ति के लिए स्वपितृस्थानीय सूर्य के पास जाती है और जब सुन्दर वस्त्र पहिनकर सुन्दरी नायिका की भाँति अपने पति के सामने अपने सौन्दर्य को प्रकट करती है तब ऋषि उसे एक सुन्दर स्त्री के रूप में देखकर आनन्दित हो जाता है और कवित्वमयी अलंकृत भाषा में उसका चित्रण करता है।

'जायेव पत्या उशती सुवासा संस्मयमाना।
युवतिः पुरस्तादाविर्वक्षांसि कृणुषे विभाती।

काव्य मानव जीवन की सार्थकता का सर्वोत्तम सोपान है। अतएव वेदों से लेकर अभिजात संस्कृतवाङ्मय तक सैकड़ों आचार्यों, कवियों एवं सहृदय समीक्षकों ने कवित्व की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है। संसार में मनुष्य का जन्म पाना ही दुर्लभ है, मनुष्य जन्म पाकर भी विद्या की प्राप्ति अत्यन्त दुर्लभ है, विद्या पाकर भी कवित्व पाना और कवित्व पाकर भी नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा पाना दुष्कर है। अग्निपुराण के इस मन्तव्य से कवित्व की महिमा स्पष्ट हो जाती है।

माधुर्य की चरम सीमा अमृत में निहित है? परन्तु इसका भी क्या प्रमाण? देवता तो रहते हैं स्वर्ग में और हम मनुष्य लोग रहते हैं पृथ्वी पर। फिर यह कैसे निश्चय किया जाय कि काव्य का रस अधिक मीठा होता है अथवा अमृत का? यह तुलना से ही सम्भव है और तुलना के लिए दोनों पदार्थों को सामने उपस्थित होना चाहिए। दुर्भाग्य से अमृत एवं काव्यरस में तुलना सम्भव नहीं, क्योंकि एक स्वर्ग में है तो दूसरा पृथ्वी पर। मनुष्यों ने अमृत नहीं पिया तो (अभागे) देवताओं ने भी तो काव्यास्वाद को कहाँ प्राप्त किया?

'कान् पृच्छामः सुशः सर्वे निवसामो वयं भुवि।
किं वा काव्यरसः स्वादुः किं वा स्वादीयसी सुधा।।'

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580|

| Volume 9, Issue 10, October 2022 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2022.0910019 |

जगत के विभिन्न सुख - दुःखों , आघात - प्रत्याघातों , सरस - कटु अनुभवों से प्रेरणा पाकर गहन अनुभूतियों के क्षणों में निष्पन्न भावुक हृदय की अनूठी गद्य - पद्यमयी रचना ‘ काव्य ’ कहलाती है। काव्यशास्त्र के शब्दों में - ‘ तस्य कर्म स्मृतं काव्य ’ कवि की रचना को ‘ काव्य ’ कहते हैं। जो कवयन करे अर्थात् वर्णन करे वह कवि है और उसका कर्म ‘ काव्य ’ है। यहाँ ध्यातव्य है कि संसार में ऐसे भावुक जन बहुत हैं जिन पर जागतिक सुख - दुःखमयी अनुभूतियाँ जब प्रहार करती हैं तो उन्हें विकल बना देती हैं , किन्तु उन भावुक जनों में सब कवि नहीं हो जाते। ‘ कवि ’ होने के लिए ‘ प्रतिभा ’ चाहिए , जो शब्दार्थ का उपयुक्त चयन कर अपनी अनुभूति को रमणीय अभिव्यक्ति दे सके। इस ‘ प्रतिभा ’ अथवा ‘ शक्ति ’ से मुक्त भावुक व्यक्ति ही ‘ कवि ’ कहलाता है और वह जो कुछ लिखता है वह ‘ काव्य ’ होता है। कवि का यह काव्य न केवल उनके अनिर्वचनीय हृदयगत मनोभावों को प्रकट करता है , अपितु जीवन के दृश्या - दृश्य समग्र पक्षों को देखते हुए सजीव चित्रण करता है। अतएव ‘ कवयः क्रान्तदर्शिनः ’ कहा गया है। ध्वन्यालोककार आनन्दवर्धनाचार्य ने कवि को स्वयं प्रजापति और काव्य को उसकी सृष्टि कहा है। आचार्य मम्मट ने तो कवि की सृष्टि को ब्रह्मा की सृष्टि से उत्कृष्ट मानकर काव्य की चतुर्विध विशेषताओं का उल्लेख किया है।

नवन्वोन्मेष शालिनी प्रतिभा वल्लरी की उन्मुक्त गोंद में विकसित होने वाले काव्य - कुसुम की सर्वांगीण रूपरेखा को लक्षण के एक सूत्र में बांधना कोई आसान काम नहीं है। शुरू से लेकर आज तक ‘ काव्य ’ की न जाने कितनी परिभाषायें बनी , पता नहीं कितने आचार्यों ने इसे लक्षण के दायरे में बांधना चाहा और बहुत से कलापारखियों ने इसे परखने के लिए अपने - अपने मानदण्ड स्थापित किये , लेकिन यह किसी के पकड़ में नहीं आया।[9,10]

काव्यशास्त्र का इतिहास इस तथ्य का साक्षी है कि ‘ काव्य ’ की अनेक परिभाषायें बनी हैं और बनती जा रही हैं। यह सर्वसम्मत तथ्य है कि मूर्त पदार्थों की अपेक्षा अमूर्त पदार्थों की परिभाषा करना ज्यादा कठिन होता है , क्योंकि वे (अमूर्त पदार्थ) केवल भावात्मक एवं रागात्मक संवेदनाओं की ही उपज होते हैं। ‘ काव्य ’ भी एक ऐसा ही अमूर्त पदार्थ है।

‘ काव्य ’ का यह चिरन्तन सत्य पुराने से पुराने और नये से नये आलोचकों द्वारा निर्धारित की गयी , सभी काव्य परिभाषाओं में समाया हुआ है , इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि ‘ काव्य ’ के स्वरूप को समझने के लिए संस्कृत के पुरातन आचार्य भरतमुनि से लेकर आज तक के कुछ प्रमुख काव्यसमीक्षकों के इस सम्बन्ध में विचार प्रस्तुत हैं --

भारतीय संस्कृत समीक्षकों में नाट्यशास्त्र के प्रणेता भरतमुनि का नाम सबसे पहले लिया जाता है। यद्यपि इन्होंने सामान्य रूप से ‘ काव्य ’ के स्वरूप पर कोई प्रकाश नहीं डाला है क्योंकि इनकी दृष्टि ‘ द्रश्य काव्य ’ तक ही सीमित रही है , तथापि नाटक के लिए इन्होंने जिस प्रकार के स्वरूप की परिकल्पना की है , उसे सामान्य रूप से ‘ काव्य ’ भी कहा जा सकता है।

भरतमुनि की दृष्टि में -

‘ मृदुललितपदाढ्यं गूढ़शब्दार्थहीनां ,
जनपदसुखबोध्यं युक्तियत्रत्ययोज्यम्।
बहुकृतरसमार्ग सन्धिसन्धानयुक्तं ,
भवति जगति योग्यं नाटकं प्रेक्षकाणाम्।। ’

लोक में नाटक रोचक हुआ करता है। इसकी रचना कोमल और ललित पदों से की जाती है। इसके शब्दों का अर्थ दुरूह नहीं होता है। यह लोगों को आसानी से समझ में आ जाता है , इसमें समुचित नृत्य की संयोजना होती है। रसों का प्रवाह होता है और कथावस्तु की सन्धियों का संयोग रहा करता है।

उनके अनुशीलन से काव्य का जो रूप उभरता है वह इस प्रकार है

1. काव्य की शब्दशय्या कोमल एवं ललित होनी चाहिए।
2. अर्थबोध में दुरूहता और अविश्वसनीयता नहीं होनी चाहिए।
3. प्रतिपाद्य भावना में अनुकूल संवेदना को उभारने की क्षमता होनी चाहिए।
4. नृत्यबद्धता और कथावस्तु की सन्धियों का उतार - चढ़ाव भी होना चाहिए।

भामह की दृष्टि में -

‘ शब्दार्थो सहितौ काव्यम्ष्

अर्थात् शब्द एवं अर्थ की समष्टि ही काव्य है।

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580|

| Volume 9, Issue 10, October 2022 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2022.0910019 |

दण्डी की दृष्टि में -

‘ शरीरं तावदिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली। ’

मनोरम हृदयाहलादक अर्थ से युक्त पदावली (शब्दसमूह) ही काव्य का शरीर है। दण्डी ने ही अपने इस काव्य लक्षण में शब्द को ‘ शरीर ’ मानकर ‘ काव्य - पुरूष ’ जैसे रूपक का प्रथम सूत्रपात किया है।
वामन की दृष्टि में -

‘ काव्यशब्दोऽयं गुणालङ्कारसंस्कृतयोः शब्दार्थयोर्वर्तते। ’

आचार्य मम्मट की दृष्टि में -

“ तद्दोषौ शब्दार्थो सगुणावनलङ्कृती पुनः क्वापि। ’

अर्थात् शब्द एवं अर्थ की वह समष्टि काव्य है जो दोषरहित हो , गुणों से युक्त हो और यथासम्भव अलंकारों से भी संवलित हो।
आचार्य विश्वनाथ की दृष्टि में -

‘ वाक्यं रसात्मकं काव्यमं ”

अर्थात् रसमय वाक्य ही काव्य है।
पण्डितराज जगन्नाथ की दृष्टि में -

प्रमणीयार्थप्रतिपादकः शब्दः काव्यम्। ”

परिणाम

गीतिकाव्य के उद्भव और विकास के सन्दर्भ में आचार्य नन्द दुलारे बाजपेयी स्वीकार करते हैं कि षीतों का इतिहास अत्यन्त प्राचीन और समुज्ज्वल है। प्रतीत होता है कि गीतकाव्य की प्राचीनतम स्फूर्ति है और मानव स्वभाव की एक मौलिक वृत्ति है। सुश्री महादेवी वर्मा षीति (जिसे वह गीत कहती है) को साधारणतः व्यक्तिगत सीमा में तीन सुख दुखात्मक अनुभूति का वह शब्दमयी रूप मानती है , जो अपनी ध्वन्यात्मकता में गेय हो सके। इसी प्रकार से समकालीन गीतिकार नीरज का मानना है कि नीति (गीत राष्ट्र से सम्बोधित करते हैं) काव्य का सबसे प्राचीनतम रूप है , कभी बह मंत्र बनकर रहा , कभी अचा बनकर , कभी श्लोक बनकर , कभी गान बनकर और कभी गीत बनकर।
गीतिकाव्य और गीतकाव्य में यूं तो किसी प्रकार का अन्तर प्रतीत नहीं होता है। सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर इसमें पार्थक्य दिखाई देता है अंग्रेजी साहित्य में दो शब्द इस हेतु प्रयुक्त होते हैं - (1) साँग (वेदह) , (2) लिरिक (सलतपब) हिन्दी में सॉग गीतका पर्याय है और गीति ‘ लिरिक ’ का पर्याय कहा जाता है। इन दोनों का आकार - प्रकार भी भिन्न होता है। साथ ही तत्व की दृष्टि से गीत में संगीत तत्व की प्रधानता अधिक होती है तथा अनुभूति कम साथ ही बाह्य वर्णन का आधिक्य होता है। जबकि गीति में अनुभूति का वैशिष्ट्य होता है। शेष तत्व गौड़ होते विभिन्न विद्वानों ने गीति काव्य के सन्दर्भ में अपने - अपने मतानुसार परिभाषायें प्रस्तुत की हैं। डॉ० रामकुमार वर्मा के अनुसार ‘ गीतिकाव्य का यह लक्षण है कि उसमें व्यक्तिगत विचार , भावोन्माद , आशा - निराशा की धारा अबाध रूप से बहती है। कवि के अन्तर्जगत् के सभी विचार - व्यापार उस काव्य में संगीत के साथ व्यक्त होते हैं।
गीतिकाव्य लोकमानस का सुधा बिन्दु है उसमें व्याप्त मानव मन की अनुभूतियाँ , उसके आधार - विचार , दुख - सुख , करुणा , रुदन सभी क्रियायें उसके भावातिरेक को संगीत के साथ व्यक्त करती है। [11,12] इसी प्रकार के भाव की अभिव्यक्ति आचार्य सेवक वात्स्यायन की परिभाषा में देखी जा सकती है। ‘ गीतिकाव्य कविता की सभी गेय विधियों का स्थूल नामकरण है , जिसका गीत या नवगीत नाम से पारम्परिक विकसित सम्बोधन एक विशिष्ट शैली का परिचायक माना जाता है। संसार के किसी भी काव्य साहित्य में गीतितत्व के भावोन्मेष से व्यक्ति की एकात्म अनुभूति में सुख , दुख करुणा के भावों का व्यापक मानवी संवेदन जिन रचनाओं में होता रहा है , चाहे वह चरवाहों की बोली में हो या आदि मानव को अविकसित भाषा और शब्द मंजूषा से निकले स्वरों में , चाहे किसी प्रबंध काव्य के रूप में हो या स्वतन्त्र स्वर लहरियों में निकली छोटी या बड़ी पंक्तियों में अन्तःकरण की अनुगूंज को वाणी में व्यक्त करती अनुभूतियों के गायन गीति ही होते हैं जिनमें रूदन भी होता है , आह्लाद की किलकारियाँ भी होती है और मांसल शब्द सौन्दर्य से शब्द , स्पर्श रूप , रस गान्ध की स्वकल्पित भावधारा तो होती है , प्रकृति के नैसर्गिक सौन्दर्य से प्रभावित उद्दीपक स्थितियाँ भी होती है और भयंकर संत्रासों के आइ और कराह भरे क्षणों में निकली पीड़ा का प्रवाह भी होता है तथा जीवन की सारता और निःसारता

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580|

| Volume 9, Issue 10, October 2022 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2022.0910019 |

के चिन्तन और दर्शन से संभूत शान्ति और शान्त रस तक की अभिव्यंजना के अनुभूत सत्यों को निरूपित करते निष्कर्ष भी होते हैं।

गीतिकाव्य में कवि या लेखक की स्वानुभूति या आत्मगतता की अभिव्यंजना प्रमुख तत्व है। एक ऐसी अभिव्यंजना जो कालान्तर में जन चेतना में घुल-मिलकर सहज ध्वनि शब्दों में रूपान्तरित हो जाए और लोक धुन बनकर गूंज उठे। वही गीति है।

डॉ. रामेश्वर प्रसाद गीतिकाव्य को परिभाषित करते हुए लिखते हैं कि षीतिकाव्य वह काब्ध है जिसकी आत्मा अन्तर्निहित संगीत से युक्त अपने सृष्टा की हृदयानुभूतियों का सहज विस्फोट हो और जिसका कलेवर अपनी रचना में किसी नियम का अनुगामी न होकर भी इतना सुगठित एवं स्वस्थ हो कि भाव के आंकलन व विकास में स्वतः समर्थ बन्ने रहकर रसानुभूति करा सके। द्विवेदी जी द्वारा प्रस्तुत परिभाषा अन्य परिभाषाओं की तुलना में अत्यन्त संक्षिप्त और सटीक है।

द्विवेदी जी के द्वारा निर्धारित गीतिकाव्य के कुछ प्रमुख तत्व भी हैं जिनके आधार पर गीतिकाव्य का आंकलन किया जाता है, जैसे -

1. व्यक्तिपरक तथा आत्मनिष्ठ अन्तर्दृष्टि.
2. अन्तनिहित संगीतात्मकता
3. संकलित भाव की आखण्डित एकता तथा उसकी आद्योपान्त अप्रतिहत एकतानता
4. सुगठित, सुसम्बद्ध शिल्प
5. रस निष्पत्ति और प्रभावोत्पादकता

इस प्रकार से गीति को परिभाषित करते हुए विद्वानों ने उसके तत्वों की और भी संकेत किया है साथ ही तत्वों की अनिवार्यता को भी गृहण किया है।

बिकसित गीतिकाव्य धारा का आरम्भिक चरण लोक जीवन है और आदिम मानव की सहन प्रस्फुटित बाणी - लोकभाषा, जिसको उत्पत्ति सम-सामयिक नहीं वेदों से पूर्व की है। जैसा कि रामदहिन मिश्न के शब्दों से स्पष्ट है - षीतिकाव्य व कलागीत का मूलाधार लोक गीत है।"

डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के विचारानुसार

"यहाँ की मूल सभ्यता वैदिक सभ्यता से एकदम भिन्न थी और आज भी लोकाचार, स्त्री आचार, पौराणिक परम्परा आदि के रूप में वह विद्यमान है। ग्राम गीत इस सभ्यता के वेद हैं।" डॉ सच्चिदानन्द तिवारी ने अपने शब्दों को व्याख्यायिक करते हुए लिखा है कि 'लोकगीत साहित्यिक गीतों से बहुत प्राचीन हैं, साथ ही डॉ तिवारी ने देवेन्द्र सत्यार्थी तथा कुंज बिहारी दास के मतों का प्रमाण देकर स्पष्ट किया है कि इनकी रचना मानव के आदिकाल में हुयी और इनमें के जातीय संगीत का स्वरूप सुरक्षित है। इनमें मानब के अकृत्रिम जीवन का स्वाभाविक स्वरूप है।[13,14]

निष्कर्ष

गीतिकाव्य का विवेचन करते हुए प्रसिद्ध आलोचक हंस कुमार तिवारी ने विभिन्न प्रकार के नीतिकारों एवं गीतों का उल्लेख करते हुए लिखा है कि – "फिर भी हमें स्वीकार करना पड़ता है कि नीति-कविता अपने परमोत्कर्ष पर अभी नहीं पहुंची है। उसमें जिस सर्वजन-संदेद्य विशेषता की अनिवार्यता है, वह गुण अभी इसमें नहीं आ पाया है - न संवेदनीयता में, न संगीतात्मकता में। अतएव अभी हमें उस दिनक की अपेक्षा है, जब गीति-कविता लोक-जीवन से मिल जाय और कवियों की वाणी जन-जन के अधरों पर थिरक उठे।" परन्तु इधर पिछले दो-तीन दशकों में हिन्दी में अनेक सुन्दर गीतों का सृजन हुआ है और अब भी हो रहा है। इसलिए हिन्दी गीति-काव्य का भविष्य उज्जवल है।

महाकवि कालिदास का नाम न केवल भारत में अपितु सम्पूर्ण धरातल पर इनकी महती प्रसिद्धि है। कविकुलगुरु के रूप में कालिदास सबके द्वारा स्वीकृत हैं। इंगलैण्ड के लोग उन्हें दूसरा 'शैक्सपीयर' कहते हैं। इटलीवासी इनकी तुलना अपने सर्वश्रेष्ठ कवियों 'दान्ते' एवं 'वर्जिल' से करते हैं परन्तु हम भारतीयों की तरह जर्मणीवासी उन्हें विश्वकवि कहकर उनके व्यक्तिîव एवं कृतित्व की प्रशंसा करते हैं। इसमें कोई दो राय नहीं कि महाकवि कालिदास संस्कृत साहित्य के सफलतम कवियों एवं नाटककारों में अग्रगण्य हैं।

दीपशिखा कालिदास रचित सात रचनाएॅं - मेघदूतम्, ऋतुसंहारम्, रघुवंशम्, कुमारसंभवम्, मालविकाग्निमित्रम्, विक्रमोर्वशीयम् और अभिज्ञानशाकुन्तलम् विश्वप्रसिद्ध हैं। कालिदासीय सप्त ग्रन्थों में मेघदूतम् का अपना विशेष महîव है। मेघदूतम् एक सफल एवं अपूर्व गीतिकाव्य है जिसकी गणना 'लघुत्रयी' में की जाती है। गीतिकाव्य खण्डकाव्य हीं होता है परन्तु इसमें कल्पना, भावना और संगीत अनिवार्य रूप से होता है।

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580|

| Volume 9, Issue 10, October 2022 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2022.0910019 |

''खण्डकाव्यं भवेत्काव्यस्यैकदेशानुसारि च' ' - के अनुसार खण्डकाव्य महाकाव्य से छोटा धार्मिक, नैतिक या श्रृंगारिक विषयों में से किसी एक का वर्णन करने वाला होता है। कथावस्तु प्रायः कविकल्पित होती है। स्वरूप की दृष्टि से गीतिकाव्य तीन प्रकार के होते हैं- प्रबन्धात्मक, निबन्धात्मक और मुक्तक।

गीतिकाव्य की जो विशेषताएॅं काव्यशास्त्रियों ने बताई है उस कसौटी पर महाकवि कालिदास का मेघदूतम् एक सफलतम गीतिकाव्य कहा जा सकता है।मेघदूत में कल्पना, भावना और संगीत की त्रिवेणी का संगम है।

प्रकृतिप्रेम, शुद्ध श्रृंगारिक एवं धार्मिक भक्ति- इन तीन भावनाओं का समन्वय है। मुख्यतया श्रृंगािरक भावना प्रधान है। प्रकृति-प्रेम की भावना श्रृंगािरक भावना का उद्दीपक है। भक्ति-भावना श्रृंगािरक भावना के उदाŸाीकरण के लिए है। इससे प्रेम की निर्मलता एवं पवित्रता बरकरार है। स्वरूप की दृष्टि से मेघदूतम् एक प्रबन्धात्मक-श्रृंगािरक-गीतिकाव्य है।

मेघदूत एक विरही, कामपीड़ित यक्ष की भावनाओं का मूŸार् रूप है। काम के वशीभूत हो अपने कर्Ÿाव्य में प्रमाद कर यक्ष ने अपराध किया है। अपराध के दण्ड स्वरूप उसे एक वर्ष तक प्रिया से वियुक्त होकर दूर रहने की सजा मिली है। वह शापित है। शाप-दण्ड भोगने के लिए रामगिरि में प्रवास कर रहा है। मेघदर्शन से उसकी सोई हुई कामवासना तीव्रतर रूप में प्रकट होती है। कवि ने अपनी कल्पना से भावोŸोजना के लिए मेंघ को उपस्थित का सूक्ति के द्वारा प्रमाणित भी किया है-

तस्य स्थित्वा कथमपि पुरः कौतुकाधानहेतो-
रन्तर्वाष्पश्चिरमनुचरो राजराजस्य दध्यौ।
मेघालोके भवति सुखिनोऽप्यन्थावृŸिा चेतः
कण्ठाश्लेषप्रणयिनि जने किं पुनर्दूरसंस्थे।।

भावना के उद्दीप्त होने पर दूत-प्रेषण आवश्यक हो जाता है। कवि कालिदास ने यहाॅं अन्य को उपस्थित न कर मेघ को हीं दूत बनाने की सुन्दर कल्पना की है। इस पर किसी को आपŸिा न हो जाए इसलिए आपŸिा के निवारण के लिए कवि स्पष्ट शब्दों में कह देता है-

धूमज्योतिः सलिलमरुतां सन्निपातः क्व मेघः
सन्देशार्थाः क्व पटुकरणैः प्राणिभिः प्रापणीयाः।
इत्यौत्सुक्यादपरिगणयन् गुह्यकस्तं ययाचे
कामार्ता हि प्रकृतिकृपणास्चेतनाचेतनेषु।।

सचमुच-

' 'जल अनिल अनल औ धूमराशि का बना हुआ वह मेघ कहाॅं ?
मानव के द्वारा प्रेषणीय उसका वह प्रिय सन्देश कहाॅं ?
उत्सुकता में बिन सोचे हीं गुह्यक ने उससे मिन्नत की।
जड़-चेतन में कामी प्राणी है पाता कोई भेद नहीं।।''

इस प्रकार हम देखते हैं कि कल्पना और भावना का सुन्दर सम्मिश्रण मेघदूत में हुआ है। कल्पना और भावना के इस मिश्रण में कौन गौण है और कौन प्रधान -यह भेद करना कठिन है। कल्पना और भावना का यह अपूर्व मेल कालिदास हीं कर सकते हैं। कल्पना और भावना का यह अनोखा संगम सर्वत्र मेघदूत में द्रष्ट्व्य है-

' ' तां चावश्यं दिवसगणनातत्परामेकपत्नी-
मव्यापन्नामविहतगतिर्द्रक्ष्यसि भातृजायाम्।
आशाबन्धः कुसुमसदृशं प्रायशो ह्यङ्गनानां
सद्यः पाति प्रणयि हृदयं विप्रयोगे रूणद्धि।।' '

अपि च,

जातं वंशे भुवनविदिते पुष्करावर्तकानां
जानामि त्वां प्रकृतिपुरुषं कामरूपं मघोनः।
तेनार्थित्वं त्वयि विधिवशाद् दूरबन्धुर्गतोऽहं
याच्ञा मोघा वरमधिगुणे नाधमेलब्धकामा।।

कालिदास का मेघदूत दो भागों में विभक्त है- पूर्वमेघ और उŸारमेघ। पूर्वमेघ में मेघमार्ग के ब्याज से कवि ने भारत के सुन्दर भौगोलिक दृश्यों का चित्रण किया है। अपने अराध्य देव देवाधिदेव महादेव को भी सदैव स्मरण करते हुए अपनी लेखनी को अविरल गति प्रदान की है। यह पद्य द्रष्ट्व्य है जिसमें कवि मेघ से महाकाल की नगरी उज्जयिनी पाने का आग्रह करता है-

''वक्रः पन्था यदपि भवतः प्रस्थितस्योŸाराशां
सौधोत्सङ्गप्रणयविमुखो मा स्म भूरूज्जयिन्याः।
विद्युद्दामस्फुरितचकितैस्तत्र पौराङ्गनानां

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580|

| Volume 9, Issue 10, October 2022 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2022.0910019 |

लोलापाङ्गैर्यदि न रमससे लोचनैर्व´ ्चितोऽसि।।' '

कालिदास प्रकृति के सुकुमार कवि हैं। प्रकृति के कोमल एवं मनोहारि दृश्यों को अंकित करना उन्हें सदैव प्रिय है। [15,16] प्रकृति का यह श्रृंगारिक रूप किस सहृदय को आकृष्ट नहीं करता जिसमें कवि मेघ के समक्ष गम्भीरा नदी का नायिका के रूप में वर्णन करता है-

"तस्याः कि´ ्चित्करधृतमिव प्राप्तवानीरशाखं
हृत्वा नीलं सलिलवसनं मुक्तरोधोनितम्बम्।
प्रस्थानं ते कथमपि सखे लम्बमानस्य भावि
ज्ञातास्वादो विवृतजघनां को विहातुं समर्थः।।' '

इतना ही नही पूर्वमेघ के अन्त में कैलास की गोद में अलका का वर्णन कितना चिŸाा कर्षक है-

' **'तस्योत्सङ्गे प्रणयिन इव स्रस्तगङ्गादुकूलां**
न त्वं दृष्ट्वा पुनरलकां ज्ञास्यसे कामचारिन्।
या वः काले वहति सलिलोद्गारमुच्चैर्विमाना
मुक्ताजालग्रथितमलकं कामिनीवाभ्रवृन्दम्।।' '

सचमुच कल्पना एवं भावना के चित्रण में मेघदूत अपूर्व है।

संगीततŸव तो मेघदूत का प्राण हीं है। गीतिकाव्यसंगीत के विना प्राणहीन है। कालिदास ने इस बात पर बड़ी गम्भीरता से से विचार करते हुए संगीततŸव को पराकाष्ठा पर पहुँचाने के लिए 'मन्दाक्रान्ता' नामक छन्द का प्रयोग किया है। मन्दाक्रान्ता विप्रलम्भ श्रृंगार के वर्णन में , वर्षा ऋतु के वर्णन में तथा संगीत भावना की उत्पŸिा में श्रेष्ठ माना गया है। कवि ने सम्पूर्ण काव्य में इसी मन्दाक्रान्ता का आश्रय लिया है। आदि से अन्त तक मन्दाक्रान्ता छन्द मन्द-मन्थर गति से चलता है। प्रकृति चित्रण में मन्दाक्रान्ता की मन्थर चाल तो देखिए-

मन्दं-मन्दं नुदति पवनश्चानुकूलो यथा त्वां
वामश्चायं नदति मधुरं चातकस्ते सगन्धः।
गर्भाधानक्षणपरिचयान्नूनमाबद्धमालाः
सेविष्यन्ते नयनसुभगं खे भवन्तं बलाकाः।।

मन्दाक्रान्ता की मन्थरगति संयोगश्रृंगार के छींटों को विलासमय ढंग से विखेरता है तो विप्रलम्भश्रृंगार के करूण कोमलभाव को सुन्दरता से वहन करता हुआ अपनी ललित यतियों से अभिव्यक्ति प्रदान करता है-

संतप्तानां त्वमसि शरणं तत्पयोद ! प्रियायाः
सन्देशं मे हर धनपतिक्रोधविश्लेषितस्य।
गन्तव्या ते वसतिरलका नाम यक्षेश्वराणां
वाह्योद्यानस्थितहरशिरश्चन्द्रिकाधौतहर्म्या।।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि मेघदूतम् अपनी कल्पनाओं की रमणीयता, भावनाओं की तरलता एवं संगीत की मधुरता केकारण संस्कृत साहित्य में ही नहीं अपितु विश्वसाहित्य में एक अपूर्व एवं सफलतम गीतिकाव्य के रूप में अपना उच्चस्थान बनाता हुआ अपने प्रणेता कालिदास को उत्कृष्ट कोटि के गीतिकाव्यकार के रूप में प्रमाणित एवं स्थापित करता है, जिनके समान शायद दूसरा कोई नहीं।[17] सचमुच -

पुरा कवीनां गणनाप्रसङ्गे कनिष्ठकाधिष्ठित कालिदासः।
अद्यापि तŸाुल्यकवेरभावादनामिका सार्थवती बभूव।।

संदर्भ

1. काव्यशास्त्र एवं साहित्यालोचन , गीतिकाव्य उद्भव परंपरा एवं प्रवृत्तियाँ या विशेषताएँ
2. आधुनिक गीतिकाव्य का शिल्प विधान , डॉ० मंजु गुप्ता , पृष्ठ - 1
3. आधुनिक हिन्दी गीतिकाव्य रू विषय और शिल्प , डॉ 0 जीवनप्रकाश जोशी , पृष्ठ - 53
4. आधुनिक हिन्दी गीतिकाव्य का स्वरूप और विकास , डॉ 0 आशाकिशोर , पृष्ठ . 259
5. स्वातंत्र्योत्तर हिंदी गीतिकाव्य का शिल्पविधान , डॉ० रामसिंह अत्रि , पृष्ठ - 71
6. काव्यरूपों के मूल स्रोत और उनका विकास , डॉ० शकुन्तला दुबे , पृष्ठ - 279
7. गीतिका , निराला , पृष्ठ - 3 (भूमिका)
8. आधुनिक गीतिकाव्य का शिल्प विधान , डॉ० मंजु गुप्ता , पृष्ठ - 1

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580|

| Volume 9, Issue 10, October 2022 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2022.0910019 |

9. गीतिकाव्य का विकास, लालधर त्रिपाठी 'प्रवासी', पृष्ठ - 452
10. आधुनिक गीतिकाव्य का शिल्प विधान, डॉ0 मंजु गुप्ता, पृष्ठ - 2-3
11. भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य शास्त्र का सिद्धान्त, डा0 राजकिशोर सिंह, पृ० 320-21.
12. रश्मि रेखा, गीत काव्य और बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', पृष्ठ।
13. आचार्य सेवक वात्स्यायन - गीतीतिहास में ये गीत (सम्पादक डॉ सूर्य प्रसाद शुक्ल), पृष्ठ - 17, 18
14. डॉ रामेश्वर प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी गीतिकाव्य, पृष्ठ 17
15. वही, पृष्ठ 18
16. राम दहिन मिश्र, काव्य विमर्श, पृष्ठ 153
17. (हजारी प्रसाद द्विवेदी का कथ्य) डॉ. रामेश्वर प्रसाद द्विवेदी की पुस्तक, हिन्दी गीतिकाव्य' से, उच्छुत, पुष्ठ - 44

INNO SPACE

SJIF Scientific Journal Impact Factor

Impact Factor: 7.580

doi crossref

निस्केयर NISCAIR

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

IN SCIENCE, ENGINEERING, TECHNOLOGY AND MANAGEMENT

+91 99405 72462 +91 63819 07438 ijmrsetm@gmail.com

www.ijmrsetm.com